ECONSPEAK: A Journal of Advances in Management IT & Social Sciences,
Vol. 16, Issue 1,Jan 2026 Impact Factor 8.059 ISSN: (2231-4571)
www.skirec.org Email Id: skirec.org@gmail.com

सन्त शिरोमणि गुरू रविदास जी का दार्शनिक चिन्तन

प्रो0 (डॉ0) मनमोहन गुप्ता
अध्यक्ष एवं अधिष्ठाता
शिक्षा विभाग
रास बिहारी बोस सुभारती विश्वविद्यालय
देहरादून, उत्तराखण्ड

मोहित सिंह
शोधार्थी
शिक्षा विभाग
रास बिहारी बोस सुभारती विश्वविद्यालय
देहरादून, उत्तराखण्ड

शोध सारांश

सन्त रविदास जी भक्त कवि तथा उच्च कोटि के समाज सुधारक थे। उनका काव्य जन–साधारण को सामूहिक रूप से प्रभावित करने वाला था। उनके दर्शन का सीधा सम्बन्ध जन–जीवन के सघर्षों से होता है। सन्त रैदास जी का दर्शन परम सत्य एवं ब्रहमा पर आधारित है। संत रैदास जी का दर्शन ब्रहम, जीव, आत्मा, जगत, माया एवं मोक्ष सम्बन्धी विचारों पर आधारित है। संत रविदास जी ने जगत को मिथ्या मानकर कर्म क्षेत्र को स्वीकारा है। संत रविदास जी जूते बनाने का कर्म करते हुए भी प्रभु की भक्ति में लीन रहते थे। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज को निर्गुण पार ब्रहम का संदेश देने का कार्य किया है। इसी कारण सन्त रविदास जी दार्शनिक चिन्तन आज भी प्रासगिंक है।

मुख्य शब्द : *संत रविदास जी, दार्शनिक चिन्तन, निर्गुण संत, निराकार संत।*

प्रस्तावना

सन्त रविदास जी का चिन्तन दार्शनिक है। जिसका वर्णन उनके द्वारा लिखित ग्रन्थों में मिलता है। उन्होंने अपने गुरू स्वामी रामानन्द जी, विभिन्न सन्तों, सत्संग, पर्यटन आदि से ज्ञान प्राप्त किया। उनकी विचारधारा में एक–सूत्रता है, उनकी वाणी से हम विभिन्न दार्शनिक समस्याओं एवं उनके समाधान के सम्बन्ध में उनके अनेक दार्शनिक विचार विभिन्न ग्रन्थों में मिलते है।

ब्रह्म :

सन्त रविदास जी शुद्ध रूप से वैष्णव थे, दार्शनिक मत–विशेष का प्रचार–प्रसार इनका लक्ष्य नहीं था। इनका मुख्य लक्ष्य निर्गुण पार ब्रह्म की भक्ति था। भक्ति वह जो रामानुज सम्प्रदाय से चली आ रही सगुण भक्ति फिर भी सन्त रैदास जी के काव्य में जीवनोपयोगी दार्शनिकता का साक्षात्कार होता है। तथा इनकी भक्ति में निर्गुण पारब्रह्म का समावेश पाया जाता है। इनके दर्शन में जीव, ब्रह्म, माया मोक्ष आदि दार्शनिक तत्त्वों की भी अभिव्यक्ति मिलती है। दर्शनशास्त्र में ब्रह्म शब्द बार–बार मिलता है। किसी अज्ञात सत्ता के प्रति जिज्ञासा, मानव की आदिकालीन प्रवृत्ति रही है। जब से उसने चिन्तन आरम्भ किया तभी से बाहर होने वाले प्राकृतिक व्यापार एवं घटनाओं के पीछे किसी अव्यक्त सत्ता का हाथ उसने सदा से ही देखा, वास्तविकता यह है ब्रह्म विषयक जिज्ञासा सदा अपने स्थान पर अक्षुण्ण रही है। और विषय में अभी तक कोई साधकपूर्ण ज्ञान उपलब्ध करने का दावा नहीं कर सका, अधिक से अधिक उसे अनुभूति मात्र का विषय कहा जा सकता है, इसके आगे सब मौन है, किन्तु अन्तस् में चिन्तन अथवा अनुभूति का सघन तत्व मात्र मौन से संतोष लाभ नहीं हो सकता। और अपने वर्णन को गलत या अपूर्ण मान कर भी पुनः विभिन्न अभिव्यक्तियाँ देता है।

"बानी के सुख कारने कहिये सृजनहार।"

संत रैदास जी का कथन है कि उस ब्रह्म के चरण पाताल में तथा उसका शीश आकाश है, ''चरण पाताल सीस असमाना, सो ठाकुर कर न सम्पुट समाना।'' वह पूर्णरूप है– ''पूरण ब्रह्म बसै सब ठाहीं।'' वह प्रत्येक पर प्राप्य है– ''पूरन ब्रह्म बसै सब ठठाहीं, कर रैदास मिलै सुख साईं।'' वह अत्यंत सूक्ष्म है किन्तु उससे ही इस सम्पूर्ण सृष्टि की अकथनीय प्रक्रिया का विस्तार होता है–

''बटक बीज जैसा औकार, पसर्‌यो तीन लोक विस्तार।
एकहि एक है, अनेक बिस्थरियो, आन भरि पूर सोऊ।''

ब्रह्म की इस पूर्णता तथा सर्वव्यापकता को संत रैदास ने पर्याप्त अनुभव किया था और उसे जीव मात्र तथा सर्वकाल में व्याप्त माना–

''आदि अंत औसान एक रस,
एक तार ही भाई,
थावर जंगम कीट पतंग,
पूरि रह्‌यो हरि राई।''

विभिन्न बिम्बों के माध्यम से इस अनुभूति को अभिव्यक्ति देने की चेष्टा की है –

''कनक कुंडल सूत पट जुदा,
श्रजु भुअंग भ्रम जैसा।
जल तरंग, पाहन प्रतिमा ज्यौं,
ब्रह्म जीव दुति औसा''

साथ ही उसको अनेक गुणों से पूर्ण, कर्त्ता–हर्त्ता आदि मानकर सम्पूर्ण व्यापार में उसी का नियंत्रण माना है–

''सरवेश्वर सवांगी, सरबगति, करत हरत सोई।''
गुन विधि बहुत रहत ससि जैसे।''

संत रैदास जी की ब्रह्म–विषयक अभुभूति की अधिक सघनता अपनी चरमता पर यह अनुभव कर उठी है कि यह सम्पूर्ण विधेयात्मक वर्णन, उस गुणों का आरोप पूरे प्रकार से उनके अनुभूत सत्य की व्याख्या नहीं कर सका, अभिव्यक्ति अनुभूति की उच्चता पर पहुँचकर उसका साथ छोड़ जाती है और तभी वे औपनिषदिक भाषा में कह उठते हैं–

''जानत जानत जान रह्‌यो सब परम कहा निज जैसा।
कहत आन अनुभवत आन रूप मिले न बेगर होई।।''

संत रैदास जी के साहित्य का गहन अध्ययन करने से ब्रह्म विषयक भावना का पता चलता है कि वे पूर्णरूपेण ब्रह्म उपासक थे। इनमें अन्य संतों की भाँति परम तत्त्व को विभिन्न रूपों में व्यक्त करने की क्षमता पाई जाती है। संत रैदास जी सगुन–निर्गुण में समन्वय भाव रखते थे। यह भी सत्य प्रतीत होता है कि वैष्णव दर्शन ने भी उन्हें प्रभावित किया। अतः तुलसीदास जी की तरह संत रैदास जी सगुण और निर्गुण दोनों विचारधाराओं से प्रभावित हुए।

आत्मा :

दर्शन सम्प्रदाय में चाहे अस्तित्व दर्शन हो चाहे नास्तिक दर्शन हो सभी आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार करते हैं। कठोपनिषद् में आत्मा के विषय में कहा गया है कि आत्मा नित्यवस्तु है, न कभी मरती है, न कभी दोषों को प्राप्त होती है। वह हमारी इन्द्रियों तथा बुद्धि व मन से भिन्न है। कठोपनिषद् में इन रूपक के माध्यम से आत्मा के रथ का स्वामी माना गया है। ''स्पष्टतः आत्मा को रथी मानकर राम ने आत्मा की सर्वश्रेष्ठता स्वीकार की है।'' शरीर रथ है और आत्मा इसका संचालक है। अतः आत्मा ही शरीर का स्वामी है। सभी इन्द्रियाँ आत्मा की आज्ञा का पालन करती है। इसका निवास हृदय में है। यह सूक्ष्म से सूक्ष्म और महान से महान है। आत्मा सभी कर्म बन्धनों से मुक्त है। यह अजर, अमर, अनादि और नित्य है–

''न जायते म्रियते वा कदाचिन्
नाथ भूत्वा भविता का न भूयः
अजो नित्यः शाश्वतों मं पुराणो
न हन्यते ध्न्याने शरीरे।''

शरीर मूलतः दो प्रकार का होता है – स्थूल शरीर और सूक्ष्म शरीर, स्थूल शरीर दृश्यमान पार्थिव शरीर को कहते हैं जो नष्ट हो जाता है। सूक्ष्म शरीर अदृश्य है। यह मरणोपरान्त भी विद्यमान रहता है। अतः आत्मा एक निराकार चेतन वस्तु है। यह आत्मा मुक्त, अव्यय, अविनाशी सभी बन्धनों से परे है और इसलिए वह न जन्म है और न मरता है। स्वामी विवेकानन्द ने कहा है– ''आत्मा निर्भय है, अमर है, स्वतन्त्र है। अत्मा सर्वव्यापक है, वह सबके भीतर व्याप्त है, इसे किसी एक स्थान पर नहीं बताया जा सकता है। देह नाशवान है, आत्मा नहीं।'' संत रैदास विशिष्ट अद्वैतवादी हैं। वे ब्रह्म और जीवात्मा में कोई तात्त्विक अन्तर नहीं मानते। वे कहते हैं कि ब्रह्म और जीव में ऐसा ही अन्तर है जैसा सोना और सोने की बनी हुई वस्तुओं में, जल और तरंग में–

''डाल के तरंग जल मांहि सचाई,
काहि काकौ नाव धरिअै।
ऐसे तो 'मै' एक रूप है,
आपण ही निखारियै।।''

संत रैदास जी ने आत्मा को एक माना है, कि आत्मा एक अविनाशी और सर्वव्यापी है– जैसे एक ही मिट्टी से नाना प्रकार के पात्रों का निर्माण कर दिया जाता है, परन्तु वे सब एक ही मूल तत्त्व मिट्टी के बने होते हैं–

''एक माटी के सब भांडे सबका एकौ सिरजनहारा।
रविदास व्यापै एकौ घर भीतर सबको एकै घड़ै कुम्हारा।

सन्त रैदास जी ने आत्मा को निराकार माना है, उन्होंने मानव शरीर को मन्दिर तथा आत्मा को इसकी ज्योति स्वीकार किया है। जिस प्रकार ज्योति के बिना मन्दिर की शोभा नहीं है उसी प्रकार आत्मा के बिना शरीर की कोई सत्ता नहीं है।

जीव :

सन्त रैदास जी के अनुसार 'जीव' चैतन्य स्वरूप शरीर के अन्दर जो कार्यरत हैं, वहीं जीव है। यह शरीरधारी जीव जन्म लेता है और मर जाता है। यह पाँच तत्वों से निर्मित शरीर है। कर्मों के वश होकर जीव को अनेक जन्म और धारण करने पड़ते हैं। कभी मृत्युलोक और कभी स्वर्गलोक में विचरण करना पड़ता है। यही कर्त्ता एवं भोक्ता है। यही आत्मस्वरूप है। जीव

पर माया का जाल फैला रहता है, जिसके कारण यह भटकता रहता है। लेकिन यह रूप सत्य नहीं है। माया से आबद्ध जीव अज्ञानी होता है। ज्ञान की ज्योति जग जाने से यह आवरण हट जाता है। तब यह जीव ब्रह्म रूप हो जाता है। इसमें विद्यमान तत्व स्थायी और शाश्वत है। यह झूठी माया सारे संसार के त्रिविध ताप में जल रही है। इन सन्तों ने माया का परित्याग करने का उपदेश दिया है।

''झूठी माया जग डहकाया, तीनि ताप दहै रे।
कहै 'रविदास' राम जापि रसना, माया कैसे संग रहे रे।।''

''सन्त रैदास जी ने जीव और ब्रह्म में अभेदता का प्रतिपादन करते हुए कहा हैं कि जीवात्मा और परमात्मा तो एक ही हैं। किन्तु हम भ्रम के मोह माया में फंसकर इन्हें वैसे ही भिन्न समझने लगते हैं जैसे अज्ञानवश कनक और इससे बने आभूषण में भिन्नता की प्रतीति कर ली जाती है। जैसे जललहर जल से अलग नहीं हो सकता।'' जीव और ब्रह्म में कोई भी अन्तर नहीं है। यह संसार मिथ्या है। सत्य वही है जो स्थिर रहता है। किन्तु सत्य अलक्ष्य है। रैदास ने जीव का ब्रह्म से अटूट सम्बन्ध बनाया है। ये दोनों कभी अलग नहीं हो सकते। ये दोनों एक ही तत्त्व हैं, एक ही पदार्थ की दो संज्ञाएँ हैं। जब जीव कर अहं भाव नष्ट हो जाता है तब उसका द्वैत भाव नहीं रहता और वह ब्रह्म रूप हो जाता है। जिज्ञासु पुरूष अपनी बुद्धि से ज्ञान का प्रकाश प्राप्त करता है और अन्त में चिन्तन करता हुआ जीव निज रूप में मग्न हो जाता है। सन्त रैदास जी कहते हैं जब तक मनुष्य की सूरति ब्रह्म में लगी हुई है तभी तक आनन्द है। ऐसी अवस्था में हृदय में ज्ञान का दीप जल उठता है–

''सूरत शब्द जड़ एक ही, तउ पाहहि परम आनन्द।
'रविदास' अंतर दीपक जरई घट उपजहि ब्रह्म आनन्द।''

सभी जातियों के जीवों में एक ही ब्रह्म विद्यमान है। सभी में उसका नूर है। वह सभी के हृदय में वास करता है। सभी जीवों के अन्दर उस एक ही ईश्वर का वास है। सभी के अन्दर एक ही ज्योति प्रकट है।

''रविदास एकै ब्रह्म का, होई रह्यों समान प्रसार।
एक माटी के सब घट स्रजै, एकै सब कू सरजन हार।''

संत रैदास जी ने कहा है कि गुरू की आराधना के बिना जीवन निसफल है। जीव को गुरू की पूजा करनी चाहिए। गुरू और परमात्मा में कोई भेद नहीं है। इस संतों ने अपनी साधना में गुरू को प्रमुखता दी है। गुरू की कृपा से ही भगवान् की प्राप्ति होती है गुरू ही ब्रह्म है। अतः जीव ब्रह्म में कोई भी अन्तर नहीं है।

मोक्ष :

मोक्ष का शाब्दिक अर्थ मुक्ति है। मुक्ति जीव के जन्म–मरण से परे है। अर्थात् जहाँ न तो कोई दुःख है और ना ही सुख, न कोई बाधा है, वही मोक्ष है। मोक्ष के विषय में दार्शनिकों में भी मतभेद हैं। सांख्य दर्शन का मत है कि अधिभौतिक, अधिवैदिक और आध्यात्मिक दुःखों से आत्यन्तिक निवृत्ति ही मुक्ति है। 'योग' के अनुसार भोग से शून्य सत्व, रज और तम गुणों के लय हो जाने पर ही मुक्ति कहलाती है। वैशेषिक दर्शन के अनुसार बुद्धि सुखः–दुःख, इच्छा–द्वेप, प्रयत्न, धर्म आदि के संस्कारों के संस्कार नष्ट होने पर मुक्ति बताई है। नैयायिकों का मत है कि अत्यधिक दुःखों के निवृत्त हो जाने पर मुक्ति मिलती है। वेदान्त का मत है कि ज्ञान प्राप्त करने पर ही मनुष्य को मुक्ति मिलती है। कहा जा सकता है कि सभी प्रकार के

प्रपन्चों से निवृत्त होना ही मुक्ति है। इन्द्रिय निग्रह, तय, साधना और समाधि द्वारा मुक्ति सम्भव है। जीव और ब्रह्म की एकांकी भाव होने पर मोक्ष प्राप्त होता है। इसके लिए चित्त की शुद्धि आवश्यक है।

सन्त रैदास जी अपनी रचनाओं में मुक्ति की अवस्था का वर्णन करते हुए कहते हैं–

"इक बूंद सौं बुझि गई जनम जनम की प्यास
जन्म मरण बन्धन टूटई भये रविदास खलास।"

इस संसार के आवागमन का चक्र से मनुष्य तभी छूट सकता है ज बवह मुक्ति प्राप्त कर लेता है। यह आवागमन का चक्र तभी समाप्त को सकता है जब मनुष्य योग साधना एवं ध्यान समाधि में लीन होकर उसका ध्यान करे और ज्ञान प्राप्त कर ले। जो लोग प्रभु के ध्यान में लगे रहते हैं, वे बड़े ही भाग्यशाली हैं। संत रैदास कहते हैं कि वे लोग जन्म–मरण बंधन से छूट जाते हैं।

"सहज समाधि उपा रहित, होई बड़े भागिलिव लागी।
कहि रविदास उदास दास मति जनम मरण भय लागी।"

जीव और परमात्मा के भेद को समाधि द्वारा ही दूर किया जा सकता है। इस चक्र से बचने के लिए धर्म भावना का होना भी आवश्यक है, क्योंकि धर्म के द्वारा चित्त की शुद्धि होती है। चित्त के शुद्ध हो जाने पर मोक्ष की प्राप्ति होती है। फलतः योग के अष्टविध अंगों का उपयोग प्रत्येक भारतीय दर्शन ने किया है। सन्त कबीर जी ने भी मन की निर्मलता की मुक्ति के लिए आवश्यक बताया है। अज्ञान, राग, द्वेष, अहंकार आदि मोक्ष के मार्ग में बाधाएँ हैं। प्रभु भक्ति ऐसी है, जिसमें अहंकार के लिए बिल्कुल स्थान नहीं है। इसमें 'मैं' की भावना को मिटाना पड़ता है।

सन्त रैदास जी ने मानव जीवन सफल बनाने के लिए प्रभु शक्ति को एकमात्र उपाय बताया। उनके अनुसार सत्य नाम से परमतत्त्व के दर्शन होते हैं जिसके हृदय में सत्य रूप ही विराजमान रहेगा वहीं परमपद को पा सकता हैं–

"जो और धर मंहि परान है,
तौ लौ जपउ सत्त नाम।
' रविदास' परम पद पाइहिं,
जिन्ह धरि बलिया राम।"

इस तरह हम कह सकते हैं कि ज्ञान के बिना मोक्ष सम्भव नहीं, और मोक्ष से ही जीव को शान्ति मिलती है।

जगत् :

जीव जिस लोक में रहते हैं वही जग्त है। इसकी सीमा वहाँ तक है जहाँ तक मानव विचरण करता है। यह लोक नित्य है तथा क्षणभंगुर है। इस जगत् को संतों ने स्वप्निल, नश्वर और असत्य कहा है। यह जग्त असत्य है लेकिन मायालिप्त जनों को सत्य दिखाई देता है जैसे स्वप्न में सब कुछ स्पष्ट दिखाई देता है। जागने पर कुछ दिखाई नहीं देता। ये केवल भ्रम के कारण है। यह जग्त उत्पन्न और विनष्ट होता है। उत्पत्ति और विनाश का यह चक्र चलता रहता है। यह नश्वर जग्त परिवर्तनशील है। अद्वैतवाद के विचार को संत रैदास जी भी मानते हैं। ''वे जग्त की परमार्थिक सत्ता स्वीकार नहीं करते। केवल ब्रह्म की परमार्थिक सत्ता स्वीकार करते हैं। ब्रह्म सर्वत्र व्याप्त है। जैसे लोग रज्जु और सर्फ और सीप में रजत जैसी

भ्रांति करने लगते हैं, वैसे ही वे जगत् को सत्य मान लेते हैं और परमतत्त्व को भूल जाते हैं। जो परम तत्त्व को याद रखता है, उसे इस जगत् में कोई सार नहीं दिखाई देता हैं।''

रैदास जी परमात्मा को जगत् का कर्त्ता मानते हैं।

''केवल करता एक सहीकर सत्ताराम मिहि ठाई।।''

संसार की उत्पत्ति के विषय में सन्त रैदास जी की भावना अस्तित्ववादी रही है। इनकी वाणी में संसार को नश्वर बताया गया है। वें संसार को दुःखों का स्थान मानते हैं। इनकी दृष्टि में संसार कष्टों का कारण है। संत रविदास जी कहते हैं, यह संसार दुःखों का घर है। पाँच विकार–काम, क्रोध, मोह, लोभ, घृणा आदि ने मनुष्यों को दुःखी किया हुआ है। इन संतों ने पांच विकारों से मुक्ति पाने का उपदेश दिया है। रैदास जी अद्वैतमत की भांति संसार को असत्य, अस्थिर और निसार मानते हैं। यह दृश्य जगत् विनाशशील है। यहाँ जो उत्पन्न हुआ है। वह नष्ट होगा, और जो नष्ट हो रहा है उसकी सृष्टि अवश्य होगी। गीता में इसी भाव की पुष्टि में की गयी है–

''जातस्थ हि ध्रुवों मृत्युध्रुव जन्म मृतस्य च।''

अतः यहाँ सभी वस्तुएँ नश्वर हैं। जन्म–मरण शरीर के कर्म हैं। संत रैदास जी मानव शरीर की क्षणभंगुरता बताते हुए कहा हैं। कि जिस प्रकार भादो के मास में बरसात के कारण जंगल में जंगली घास खड़ी हो जाती है और वह तुरन्त नष्ट हो जाती है। वह स्थिति इस नश्वर संसार में शरीर की है।

बन्धन :

जीव कर्मों के अनुसार बन्धन में बंधता है। जैसे उसके कर्म होंगे उसी के अनुसार उसे फल मिलेगा। इस बन्धन प्रमुख्य कारण अविद्या है। यही समस्त क्लेशों, अस्मिता, राग–द्वेष का कारण है। जन्म से मरण तक क्लेशों का बीज अज्ञान में निहित है। अज्ञान ही बन्धन का कारण है। संत रैदास ने अपनी वाणी में कर्म–बन्धन का गम्भीर चिन्तन किया है। वे कहते हैं कि सांसारिक प्राणी अपने पापों के कारण कर्म बंधन में फंस जाते है। वह कर्म करते हैं और फल की इच्छा करते हैं, लेकिन फल तो धर्म पर निर्भर करता है। उसे यह ज्ञात नहीं कि कर्म करना मनुष्य का कर्त्तव्य है और फल देना भगवान् का कार्य है। संत रैदास जी कहते हैं–

''करम बन्धन भरं रमि रहयो,
फल को तजो न आस।
करम मनुष्य का धरम है,
सत भासै रविदास।।''

मानव कर्म के फल की आशा का त्याग नहीं करता, तभी वह जीवन भर कष्ट भोगता रहता है। रैदास जी कहते हैं–मनुष्य को अच्छे कर्म करने चाहिए। उनके अनुसार जो कार्य कर्म समझकर किये जाते हैं उनका फल कभी बुरा नहीं होता–

''धर्म समुझि जो कर हुई, उह कर फल होई ईष्ट।
रविदास कोई भी कर्म फल, होहि नांहि अनिष्ठा।''

निष्काम भाव से किया गया कर्म मानव को बन्धन मुक्त कर सकता है। निष्काम भाव से किये गये कर्म से ही मानव को मुक्ति मिलती है। मुहँ से प्रतिदिन राम का नाम लें और उन हाथों से अच्छे कर्म करें तो सभी विघ्न–बाधाओं से मुक्ति मिल जाती है–

"जितना भजै हरि नाम नित,
हत्थ करहि नित काम।
रविदास भरा निहचित हथ,
भय चित करेंगे राम।।"

स्तों का कहना है कि अज्ञानी लोग रात सोने में व्यतीत करते हैं और दिन विभिन्न अस्वादों को चखने में गुजार देते हैं। दुर्लभ मानव जीवन यूं ही नष्ट करने पर लगे रहते है। इसलिए संतों ने समय–समय पर अपनी साखियों द्वारा इन्हें उपदेश दिये हैं। प्रभु ही सबका बन्धन–मुक्त कर सकते हैं।

"भरत–करम जीअ बंध्यों
छुटे तुम बिन कैसे हो हरि।"

संत रैदास जी एक दार्शनिक भक्त कवि हैं। दर्शन में बन्धन और मोक्ष जैसे गम्भीर विषय हैं। यह शरीर और जगत् अनित्य है। ईश्वर अनश्वर है। यहाँ शेष सबकुछ व्यर्थ है। ईश्वर ही सत्य है। अतः रैदास जी ने मनुष्य मात्र को कहा है कि सांसारिक भोग्य–पदार्थों से ध्यान हटाकर उस सर्वव्यापक को स्मरण करो। बन्धन से बचने के लिए सर्वोत्तम साधन है। बन्धनों का जात–अविद्या, कर्म और माया है। इन तीनों से बचना चाहिए, तभी मनुष्य बन्धनों से छुटकारा पाकर मुक्ति को प्राप्त कर सकता है। बन्धनों से छुटकारा केवल सच्ची भक्ति से ही मिल सकता है। संत रैदास जी कहते हैं–

"स्रम कउ ईसर जानि कै, जउ पूजाई दिन रैन।
'रविदास' तिनहरि संसार महं, सदा मिलहि सुख चैन।
प्रभु भगति स्रम साधना महं जिन्हरि पास।।"

माया :

यह संसार माया की सृष्टि है जो उत्पन्न होता है। वह नष्ट हो जाता है। यह सब माया ही है। माया मिथ्या है, माया का प्रसार भी मिथ्या है। पृथ्वी, आकाश, जल–थल सब में माया का प्रसार है। इस माया ने सबको बांध रखा है। संत रैदास जी कहते हैं कि माया प्रबल है। सबको त्रिविध ताप में जलाकर भष्म कर रही है–

"झूठी माया जग डहकाया, तौ तिनिताप दहै रे।
कहै रविदास राम जपि रसना, माया काहू के संग न रहे रे।।"

संतों ने माया के विधि रूपों का वर्णन किया है। कनक और कामिनी के रूप में इसकी निदा को ही काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि में भी माया का रूप दृष्टिगोचर होता है। ये मनुष्य के शत्रु हैं। माया सभी जीवों को पीड़ित करती है। माया के प्रकार से प्रभावित मनुष्य अपने ही विषय में सोचता रहता है। इसलिए वह परमात्मा को नहीं पा सकता। माया से लिप्त मनुष्य इस असाध्य संसार को सत्य समझने लगता है। माया का दूसरा नाम अज्ञान है। दर्पण पर धूल पड जाने से वह धुंधला हो जाता है। इस प्रकार आत्मा पर अज्ञान का पर्दा पड़ जाता है, जिसमें आत्मा में परमात्मा का प्रतिबिम्ब स्पष्ट दिखाई नहीं देता। इसीलिए आत्मा रूपी दर्पण को साफ अर्थात् निर्मल रखना चाहिए। यह हरि भक्ति द्वारा ही सम्भव है। माया का पर्दा गुरू के ज्ञान से ही उठाया जा सकता है। जो मनुष्य पशु तुल्य जीवन व्यतीत करते हैं, उन्हें ज्ञान द्वारा प्रकाश मिलता है। इन संतों ने बार–बार लोगों को जगाने का प्रयास किया है। जिस शरीर के लिए, जिन सम्बन्धों के लिए तुम रात–दिन पाप करते हो, झूठ

बोलते हो, अतंतः एक दिन यह समाप्त हो जायेगा। मौत को सदैव याद रखना चाहिये। माया से छुटकारा पाने के लिए मनुष्य को राम–नाम का जाप करना चाहिए। इस कलयुग में इसी नाम का सहारा है।

शंकर के अनुसार– ''माया का स्थान ब्रह्म है, लेकिन ब्रह्म माया से अछूता रहता है। माया ब्रह्म के उसी प्रकार आश्रित रहती हैः जिस प्रकार नीला रंग आकाश पर आरोपित होने पर भी आाकश को प्रभावित नहीं करता। माया अनिर्वचनीय है, क्योंकि वह न सत् है, न असत् है, न दोनों है। माया अस्थायी है। माया का अन्त ज्ञान से होता है। लिस प्रकार रस्सी का ज्ञान होते ही रस्सी रूपी सर्प भ्रम नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार ज्ञान का उदय होते ही माया का विनाश स्वतः ही हो जाता है। माया अव्यक्त और भौतिक है। सूक्ष्म स्वरूप होने के कारण यह अव्यक्त है। माया अनादि हैः उसी से जगत् की सृष्टि होती है।'' संत रैदास जी शंकर के दर्शन को ही माना है।

निष्कर्ष :– शोध पत्र से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सन्त रविदास जी का दार्शनिक चिन्तन उच्च कोटि का है। इन्होंने अपने दर्शन में ब्रहमा, जीव, जगत, माया व मोक्ष का वर्णन किया है। सन्त रविदास जी ने ब्रहमा को सत्य एवं जगत को मिथ्या बताया है। उन्होंने कर्म को महत्व प्रदान किया है। माया ने सारे संसार को भ्रमित किया है। माया के सामने तो विद्धान एवं तपस्वी भी नहीं टीक पाया है। जीवन का अन्तिम तत्व मोक्ष है। जब आत्मा परमात्मा में विलीन हो जाती है। तब यह स्थिति मोक्ष कहलाती है। सभी जीवो का पालन करने वाले प्रभु को सच्चे प्रेम से पाया जा सकता है। गुरू रविदास जी का चिन्तन इनकी रचनाओं में देखने को मिलता है। गुरू रविदास जी का चिन्तन हम सबके लियें प्रासगिंक रहेगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. उपाध्याय, काशीनाथ(1998), ''गुरू रविदास वाणी'' प्रकाशन – राधा स्वामी सत्संग ब्यास जिला अमृतसर, पंजाब दसवां संस्करण पृष्ठ सं0 – 82
2. उपाध्याय, काशीनाथ(1998), ''गुरू रविदास वाणी'' प्रकाशन – राधा स्वामी सत्संग ब्यास जिला अमृतसर, पंजाब दसवां संस्करण पृष्ठ सं0 – 86
3. भारती, कवल(2010), ''सन्त रैदास एक विश्लेषण'', प्रकाशन– नेशनल ट्रस्ट पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या – 164
4. उपाध्याय, काशीनाथ(1998), ''गुरू रविदास वाणी'' प्रकाशन – राधा स्वामी सत्संग ब्यास जिला अमृतसर, पंजाब दसवां संस्करण पृष्ठ सं0 – 56
5. उपाध्याय, काशीनाथ(1998), ''गुरू रविदास वाणी'' प्रकाशन – राधा स्वामी सत्संग ब्यास जिला अमृतसर, पंजाब दसवां संस्करण पृष्ठ सं0 – 113

6. उपाध्याय, काशीनाथ(1998), ''गुरू रविदास वाणी'' प्रकाशन – राधा स्वामी सत्संग ब्यास जिला अमृतसर, पंजाब दसवां संस्करण पृष्ठ सं0 – 132
7. उपाध्याय, काशीनाथ(1998), ''गुरू रविदास वाणी'' प्रकाशन – राधा स्वामी सत्संग ब्यास जिला अमृतसर, पंजाब दसवां संस्करण पृष्ठ सं0 – 133
8. उपाध्याय, काशीनाथ(1998), ''गुरू रविदास वाणी'' प्रकाशन – राधा स्वामी सत्संग ब्यास जिला अमृतसर, पंजाब दसवां संस्करण पृष्ठ सं0 – 201
9. भारती, कवल(2010), ''सन्त रैदास एक विश्लेषण'', प्रकाशन – नेशनल ट्रस्ट पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या – 65
10. भारती, कवल(2010), ''सन्त रैदास एक विश्लेषण'', प्रकाशन– नेशनल ट्रस्ट पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या – 148
11. भारती, कवल(2010), ''सन्त रैदास एक विश्लेषण'', प्रकाशन– नेशनल ट्रस्ट पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या – 149
12. सिंह, आचार्य पृथ्वी (2014), ''गुरू रविदास पुस्तक'', प्रकाशन– नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली। पृष्ठ सं0 – 119
13. शेरवाल, डॉ0 कुसुमबाला(2021), ''सन्त रविदास वाणी'', प्रकाशन– लक्ष्य पब्लिकेशन, जयपुर, राजस्थान, पृष्ठ सं0 – 38
14. शर्मा, बेनी प्रसाद(2023), ''सन्त रविदास वाणी'', प्रकाशन– सूर्य भारती, नई दिल्ली, पृष्ठ सं0 – 69